

भारतीय उच्च शिक्षा में बहुसांस्कृतिकता और सामाजिक समरसता एक अध्ययन

डॉ. अक्षय सुराणा

सहायक आचार्य

शहीद गोरख राम वीर चक्र राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय ओसियां, जोधपुर (राजस्थान)

सारांश:

भारतीय उच्च शिक्षा प्रणाली ऐतिहासिक रूप से बहुसांस्कृतिकता, भाषाई विविधता, धार्मिक सह-अस्तित्व और सामाजिक बहुलता का प्रतिनिधित्व करती रही है। विविध सामाजिक, क्षेत्रीय, जातीय, आर्थिक तथा सांस्कृतिक पृष्ठभूमियों से आने वाले विद्यार्थी विश्वविद्यालयों और उच्च शिक्षण संस्थानों को केवल ज्ञान-प्राप्ति के केंद्र ही नहीं, बल्कि सामाजिक संवाद, सहिष्णुता और समरसता के मंच के रूप में भी स्थापित करते हैं। प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य भारतीय उच्च शिक्षा में बहुसांस्कृतिकता की अवधारणा, उसकी व्यवहारिक अभिव्यक्तियों तथा सामाजिक समरसता के निर्माण में उसकी भूमिका का विश्लेषण करना है। शोध में यह भी विवेचित किया गया है कि किस प्रकार पाठ्यक्रम संरचना, सह-पाठ्यचर्या गतिविधियाँ, संस्थागत नीतियाँ और शैक्षणिक परिवेश विविधताओं के प्रति संवेदनशीलता, समावेशन और लोकतांत्रिक मूल्यों को सुदृढ़ करते हैं। अध्ययन यह दर्शाता है कि बहुसांस्कृतिक दृष्टिकोण न केवल सामाजिक विभेदों को कम करने में सहायक है, बल्कि छात्रों में पारस्परिक सम्मान, सांस्कृतिक चेतना और सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना को भी विकसित करता है। साथ ही, वैश्वीकरण और नीतिगत परिवर्तनों के संदर्भ में उच्च शिक्षा की भूमिका को सामाजिक एकता और राष्ट्रीय एकीकरण के संदर्भ में पुनःपरिभाषित करने की आवश्यकता को रेखांकित किया गया है। यह अध्ययन नीति-निर्माताओं, शिक्षाविदों और शोधकर्ताओं के लिए बहुसांस्कृतिक एवं समरसतामूलक उच्च शिक्षा के विकास हेतु उपयोगी अंतर्दृष्टि प्रदान करता है।

मुख्य शब्द— भारतीय उच्च शिक्षा, बहुसांस्कृतिकता, सामाजिक समरसता, समावेशी शिक्षा, सांस्कृतिक विविधता, राष्ट्रीय एकीकरण

1. प्रस्तावना

भारतीय उच्च शिक्षा की परंपरा विश्व की प्राचीनतम शैक्षिक परंपराओं में से एक मानी जाती है, जिसकी जड़ें तक्षशिला, नालंदा, विक्रमशिला जैसे प्राचीन विश्वविद्यालयों तक जाती हैं, जहाँ विभिन्न क्षेत्रों, संस्कृतियों, भाषाओं और देशों से आए विद्यार्थी अध्ययन करते थे। यह ऐतिहासिक तथ्य दर्शाता है कि भारतीय शिक्षा व्यवस्था अपने आरंभ से ही बहुसांस्कृतिक संवाद, वैचारिक सह-अस्तित्व और बौद्धिक समावेशन की भावना से जुड़ी रही है (शर्मा, 2016)। औपनिवेशिक काल में आधुनिक विश्वविद्यालयों की स्थापना तथा स्वतंत्रता के बाद उच्च शिक्षा के विस्तार ने भारतीय समाज की विविधताओं को और अधिक स्पष्ट रूप से शैक्षणिक परिसरों में प्रतिबिंबित किया। इस प्रकार, भारतीय उच्च शिक्षा केवल अकादमिक प्रशिक्षण का माध्यम नहीं रही, बल्कि सामाजिक-सांस्कृतिक अंतःक्रिया का एक महत्वपूर्ण मंच भी बनती गई।

भारत की सामाजिक संरचना जाति, वर्ग, धर्म, भाषा, लिंग और क्षेत्रीय विविधताओं से निर्मित है। यह बहुलता जहाँ एक ओर भारतीय समाज की शक्ति है, वहीं दूसरी ओर असमानता, बहिष्करण और सामाजिक तनाव जैसी चुनौतियाँ भी उत्पन्न करती है। उच्च शिक्षण संस्थान इस विविध समाज का सूक्ष्म रूप प्रस्तुत करते हैं, जहाँ विभिन्न पृष्ठभूमियों से आए विद्यार्थी एक साझा शैक्षणिक वातावरण में सहभागिता करते हैं। ऐसे में बहुसांस्कृतिकता की अवधारणा उच्च शिक्षा के लिए अत्यंत प्रासंगिक हो जाती है, क्योंकि यह विविधताओं को स्वीकार करने, समझने और सम्मान देने की दृष्टि प्रदान करती है (बैक्स, 2015)। बहुसांस्कृतिक शिक्षा न केवल सांस्कृतिक चेतना को विकसित करती है, बल्कि छात्रों में लोकतांत्रिक मूल्यों, समानता और सामाजिक न्याय के प्रति संवेदनशीलता भी उत्पन्न करती है।

सामाजिक समरसता भारतीय संविधान के मूल आदर्शों—समता, स्वतंत्रता और बंधुत्व—से गहराई से जुड़ी हुई है। उच्च शिक्षा का दायित्व केवल कुशल मानव संसाधन तैयार करना नहीं है, बल्कि ऐसे नागरिकों का निर्माण करना भी है जो विविधताओं के बीच सामंजस्य स्थापित कर सकें। बहुसांस्कृतिक शैक्षणिक परिवेश सामाजिक समरसता को सुदृढ़ करने में सहायक होता है, क्योंकि यह संवाद, सहयोग और पारस्परिक सम्मान को प्रोत्साहित करता है तथा भेदभावपूर्ण दृष्टिकोणों को चुनौती देता है (सेन, 2010)। इस संदर्भ में विश्वविद्यालय सामाजिक एकीकरण और राष्ट्रीय एकता के महत्वपूर्ण केंद्र के रूप में उभरते हैं।

वैश्वीकरण और उच्च शिक्षा के अंतरराष्ट्रीयकरण ने भारतीय विश्वविद्यालयों को वैश्विक ज्ञान-प्रणालियों से जोड़ा है। अंतरराष्ट्रीय छात्रों की उपस्थिति, वैश्विक पाठ्यक्रम, डिजिटल शिक्षण और अकादमिक गतिशीलता ने शैक्षणिक परिसरों को और अधिक बहुसांस्कृतिक बना दिया है। यद्यपि यह स्थिति अवसरों का विस्तार करती है, परंतु साथ ही सांस्कृतिक टकराव, पहचान संकट और असमान पहुँच जैसी समकालीन सामाजिक चुनौतियाँ भी सामने आती हैं (अग्रवाल, 2020)। ऐसे परिवेश में बहुसांस्कृतिकता और सामाजिक समरसता पर केंद्रित अध्ययन की आवश्यकता और अधिक बढ़ जाती है। इस प्रकार, भारतीय उच्च शिक्षा में बहुसांस्कृतिकता और सामाजिक समरसता का अध्ययन न केवल शैक्षिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, बल्कि यह सामाजिक स्थिरता, समावेशी विकास और लोकतांत्रिक चेतना के निर्माण के लिए भी अनिवार्य है। यह प्रस्तावना इस शोध की वैचारिक पृष्ठभूमि को स्पष्ट करते हुए यह रेखांकित करती है कि समकालीन भारत में उच्च शिक्षा किस प्रकार विविधता को शक्ति में रूपांतरित करने की क्षमता रखती है।

2. बहुसांस्कृतिकता की अवधारणा: सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य

बहुसांस्कृतिकता की अवधारणा आधुनिक समाजों में सांस्कृतिक विविधता को समझने और उसका सकारात्मक प्रबंधन करने के प्रयास के रूप में विकसित हुई है। सामान्यतः बहुसांस्कृतिकता से तात्पर्य उस सामाजिक स्थिति से है जिसमें विभिन्न सांस्कृतिक, भाषिक, धार्मिक और जातीय समूह समान सामाजिक ढाँचे के भीतर अपनी विशिष्ट पहचान के साथ सह-अस्तित्व में रहते हैं। यह अवधारणा केवल विविधताओं की उपस्थिति को स्वीकार करने तक सीमित नहीं है, बल्कि उनके प्रति समान अवसर और सहभागिता को सुनिश्चित करने पर भी बल देती है (बैक्स, 2015)। इस दृष्टि से बहुसांस्कृतिकता समानता और न्याय पर आधारित एक मानकात्मक सिद्धांत के रूप में उभरती है।

ऐतिहासिक रूप से बहुसांस्कृतिकता का विकास पश्चिमी समाजों में उपनिवेशोत्तर परिस्थितियों, प्रवासन और नागरिक अधिकार आंदोलनों के संदर्भ में हुआ, जहाँ सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों की पहचान और अधिकारों की मान्यता एक केंद्रीय प्रश्न बन गई थी (टेलर, 1994)। यद्यपि यह अवधारणा आधुनिक अकादमिक विमर्श में अपेक्षाकृत नई मानी जाती है, भारतीय संदर्भ में सांस्कृतिक बहुलता और सह-अस्तित्व की परंपरा प्राचीन काल से विद्यमान रही है। भारतीय दर्शन में 'एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति' जैसी अवधारणाएँ विविधता में एकता के विचार को प्रतिबिंबित करती हैं, जो बहुसांस्कृतिक दृष्टिकोण का नैतिक आधार प्रदान करती हैं (सेन, 2010)।

बहुसांस्कृतिकता के प्रमुख सिद्धांतों में सांस्कृतिक बहुलवाद, समावेशन और सह-अस्तित्व विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। सांस्कृतिक बहुलवाद इस विचार को स्थापित करता है कि विभिन्न संस्कृतियाँ समान रूप से मूल्यवान हैं और किसी एक सांस्कृतिक मानक को सार्वभौमिक रूप से श्रेष्ठ नहीं ठहराया जा सकता। समावेशन का सिद्धांत यह सुनिश्चित करता है कि सामाजिक और शैक्षिक संस्थानों में सभी समूहों को समान भागीदारी और अवसर प्राप्त हों, जबकि सह-अस्तित्व विविधताओं के बीच शांतिपूर्ण, संवाद-आधारित और सहयोगात्मक संबंधों पर बल देता है (पारेख, 2006)। ये सिद्धांत बहुसांस्कृतिकता को केवल सहनशीलता तक सीमित न रखकर सक्रिय सहभागिता की दिशा में ले जाते हैं।

शिक्षा के संदर्भ में बहुसांस्कृतिक दृष्टिकोण का दार्शनिक आधार मानवतावाद, लोकतांत्रिक मूल्यों और सामाजिक न्याय की अवधारणाओं में निहित है। जॉन ड्यूई की प्रगतिशील शिक्षा-दृष्टि यह मानती है कि शिक्षा समाज का प्रतिबिंब होती है और उसे सामाजिक अनुभवों की विविधता को समाहित करना चाहिए (ड्यूई, 1916)। समाजशास्त्रीय दृष्टि से बहुसांस्कृतिक शिक्षा शक्ति-संबंधों, असमानताओं और वर्चस्वशील सांस्कृतिक संरचनाओं की आलोचना करते हुए शिक्षा को परिवर्तन के माध्यम के रूप में देखती है (बोर्डियू, 1986)। इस प्रकार, बहुसांस्कृतिकता शिक्षा को केवल ज्ञान-संचरण की प्रक्रिया न मानकर सामाजिक चेतना और समरसता के निर्माण का साधन बनाती है। अतः बहुसांस्कृतिकता का सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य यह स्पष्ट करता है कि शिक्षा, विशेषतः उच्च शिक्षा, विविधताओं के प्रबंधन का तटस्थ मंच नहीं है, बल्कि वह सामाजिक मूल्यों, पहचान और संबंधों के निर्माण में सक्रिय भूमिका निभाती है। यही कारण है कि बहुसांस्कृतिक दृष्टिकोण समकालीन शैक्षिक विमर्श में सामाजिक समरसता और समावेशी विकास के लिए अनिवार्य माना जाता है।

3. भारतीय सामाजिक संरचना और उच्च शिक्षा

भारतीय सामाजिक संरचना मूलतः बहुस्तरीय और बहुआयामी है, जिसमें जातीय, भाषाई, धार्मिक तथा क्षेत्रीय विविधताएँ गहराई से अंतर्निहित हैं। समाजशास्त्रीय दृष्टि से भारत को एक बहुलतावादी समाज माना जाता है, जहाँ विभिन्न सामाजिक समूह ऐतिहासिक रूप से अपनी विशिष्ट पहचान, परंपराओं और सांस्कृतिक मूल्यों के साथ सह-अस्तित्व में रहे हैं। जाति-प्रणाली, धार्मिक बहुलता और भाषिक विविधता भारतीय समाज की ऐसी संरचनात्मक विशेषताएँ हैं, जो सामाजिक संबंधों, अवसरों और संसाधनों की उपलब्धता को प्रभावित करती रही हैं (देसाई, 2012)। यह सामाजिक यथार्थ उच्च शिक्षण संस्थानों में भी स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है, क्योंकि विश्वविद्यालय और महाविद्यालय व्यापक समाज का ही एक सूक्ष्म रूप होते हैं।

भारत की जातीय और सामाजिक विविधता का प्रभाव उच्च शिक्षा में छात्रों और शिक्षकों की सामाजिक पृष्ठभूमि, संस्थागत संस्कृति और शैक्षणिक अनुभवों में दिखाई देता है। ऐतिहासिक रूप से उच्च शिक्षा तक पहुँच कुछ विशिष्ट सामाजिक वर्गों तक सीमित रही, जिसके परिणामस्वरूप शिक्षा असमानता का माध्यम भी बनी (अम्बेडकर, 1948)। स्वतंत्रता के बाद संवैधानिक प्रावधानों, आरक्षण नीति और सामाजिक न्याय से जुड़ी पहलों ने वंचित और हाशिए पर रहे समुदायों की उच्च शिक्षा में भागीदारी को बढ़ाया। इसके फलस्वरूप विश्वविद्यालय परिसरों में सामाजिक संरचना अधिक विविध और प्रतिनिधिक होती गई, जिससे बहुसांस्कृतिक अंतःक्रिया की संभावनाएँ भी विस्तृत हुईं।

भाषाई विविधता भारतीय उच्च शिक्षा की एक प्रमुख विशेषता है। भारत में सैकड़ों भाषाएँ और बोलियाँ प्रचलित हैं, जिनका प्रभाव शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया पर पड़ता है। यद्यपि उच्च शिक्षा में अंग्रेज़ी और हिंदी प्रमुख संपर्क भाषाओं के रूप में प्रयुक्त होती हैं, फिर भी क्षेत्रीय भाषाओं में शिक्षा प्रदान करने वाले विश्वविद्यालय स्थानीय सांस्कृतिक संदर्भों को सुदृढ़ करते हैं (पांडेय, 2018)। यह भाषाई बहुलता जहाँ एक ओर शैक्षणिक लोकतंत्रीकरण में सहायक है, वहीं दूसरी ओर भाषा-आधारित असमानताओं और समायोजन की चुनौतियाँ भी उत्पन्न करती है। धार्मिक और सांस्कृतिक

विविधता भी उच्च शिक्षण संस्थानों के सामाजिक वातावरण को प्रभावित करती है। विभिन्न धार्मिक समुदायों से आने वाले छात्रों की उपस्थिति विश्वविद्यालय परिसरों को सांस्कृतिक संवाद और सह-अस्तित्व का जीवंत स्थल बनाती है। उत्सवों, सांस्कृतिक कार्यक्रमों और छात्र-संगठनों के माध्यम से यह विविधता शैक्षणिक जीवन का अभिन्न अंग बन जाती है (सेन, 2010)। तथापि, कभी-कभी सामाजिक पूर्वाग्रह और पहचान-आधारित तनाव भी उभरते हैं, जो संस्थानों के समावेशी चरित्र को चुनौती देते हैं।

क्षेत्रीय विविधता के संदर्भ में, शहरी-ग्रामीण अंतर, केंद्र-परिधि संबंध और क्षेत्रीय विकास की असमानताएँ उच्च शिक्षा तक पहुँच और अनुभवों को प्रभावित करती हैं। राष्ट्रीय स्तर के विश्वविद्यालय और केंद्रीय संस्थान विभिन्न राज्यों से आए छात्रों को एक साझा मंच प्रदान करते हैं, जिससे अंतर-क्षेत्रीय संवाद और सामाजिक एकीकरण को बल मिलता है (अग्रवाल, 2020)। इस प्रकार, भारतीय उच्च शिक्षा संस्थान न केवल सामाजिक विविधताओं का प्रतिनिधित्व करते हैं, बल्कि उनसे निरंतर प्रभावित होते हुए सामाजिक समरसता और बहुसांस्कृतिक चेतना के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

भारतीय उच्च शिक्षण संस्थान अपने सामाजिक और सांस्कृतिक परिवेश में बहुसांस्कृतिक व्यवहारों के सजीव उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। विश्वविद्यालय परिसर ऐसे सामाजिक स्थान होते हैं जहाँ विभिन्न जातीय, भाषाई, धार्मिक, क्षेत्रीय और आर्थिक पृष्ठभूमियों से आए विद्यार्थी एक साझा शैक्षणिक जीवन में सहभागिता करते हैं। यह विविध छात्र-समुदाय न केवल कक्षाओं में अकादमिक विमर्श को समृद्ध करता है, बल्कि दैनिक अंतःक्रियाओं के माध्यम से सांस्कृतिक समझ और पारस्परिक सम्मान को भी विकसित करता है। इस प्रकार, उच्च शिक्षा के परिसर बहुसांस्कृतिक सह-अस्तित्व की व्यवहारिक प्रयोगशाला के रूप में उभरते हैं (बैक्स, 2015)।

विश्वविद्यालयों में आयोजित सांस्कृतिक उत्सव, साहित्यिक गतिविधियाँ, नाट्य प्रस्तुतियाँ और छात्र-संघों द्वारा संचालित कार्यक्रम बहुसांस्कृतिक व्यवहारों की महत्वपूर्ण अभिव्यक्तियाँ हैं। विभिन्न राज्यों और समुदायों से जुड़े उत्सवों का सामूहिक रूप से मनाया जाना छात्रों को अपनी सांस्कृतिक पहचान अभिव्यक्त करने का अवसर प्रदान करता है, साथ ही अन्य संस्कृतियों के प्रति जिज्ञासा और सम्मान की भावना को भी प्रोत्साहित करता है (पारेख, 2006)। ऐसे कार्यक्रम औपचारिक पाठ्यक्रम से इतर अनौपचारिक अधिगम के माध्यम से सामाजिक समरसता को सुदृढ़ करने में सहायक होते हैं। बहुभाषिकता भारतीय उच्च शिक्षा का एक केंद्रीय बहुसांस्कृतिक व्यवहार है। कक्षाओं, परिसरों और छात्र जीवन में हिंदी, अंग्रेज़ी तथा विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं का प्रयोग न केवल संप्रेषण का माध्यम है, बल्कि सांस्कृतिक पहचान का भी संकेतक है। बहुभाषिक शैक्षणिक परिवेश छात्रों को भाषाई लचीलापन और सांस्कृतिक संवेदनशीलता प्रदान करता है, यद्यपि कभी-कभी भाषा-आधारित असमानताएँ और अकादमिक अनुकूलन की चुनौतियाँ भी सामने आती हैं (पांडेय, 2018)। इसके बावजूद, बहुभाषिकता उच्च शिक्षा को अधिक समावेशी बनाने की दिशा में एक महत्वपूर्ण साधन बनी हुई है।

वैश्वीकरण और अंतरराष्ट्रीयकरण के प्रभावस्वरूप भारतीय विश्वविद्यालयों में अंतरराष्ट्रीय छात्रों और शिक्षकों की सहभागिता में वृद्धि हुई है। विभिन्न देशों से आए छात्रों की उपस्थिति शैक्षणिक परिसरों को वैश्विक सांस्कृतिक अनुभवों से जोड़ती है और तुलनात्मक दृष्टिकोण को विकसित करती है (अग्रवाल, 2020)। अंतरराष्ट्रीय सेमिनार, शैक्षणिक विनिमय कार्यक्रम और सहयोगात्मक अनुसंधान बहुसांस्कृतिक संवाद को और अधिक व्यापक बनाते हैं। इस प्रक्रिया में भारतीय उच्च शिक्षण संस्थान स्थानीय और वैश्विक संस्कृतियों के संगम-स्थल के रूप में उभरते हैं। इस प्रकार, भारतीय उच्च शिक्षा में विद्यमान बहुसांस्कृतिक व्यवहार केवल विविधताओं की उपस्थिति तक सीमित नहीं हैं, बल्कि वे दैनिक शैक्षणिक जीवन, सांस्कृतिक गतिविधियों और वैश्विक सहभागिता के माध्यम से सामाजिक समरसता को

व्यवहारिक रूप प्रदान करते हैं। ये व्यवहार उच्च शिक्षा को एक ऐसे सामाजिक क्षेत्र के रूप में स्थापित करते हैं जहाँ विविधता को सीखने, संवाद और सहयोग की शक्ति में परिवर्तित किया जा सकता है।

4. सामाजिक समरसता: अर्थ और शैक्षिक आयाम

सामाजिक समरसता की अवधारणा विविधताओं से युक्त समाज में संतुलन, सहयोग और पारस्परिक विश्वास की स्थिति को अभिव्यक्त करती है। इसका मूल अर्थ विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और भाषिक समूहों के बीच समानता, सह-अस्तित्व और सौहार्दपूर्ण संबंधों की स्थापना से है। सामाजिक समरसता न तो सामाजिक भिन्नताओं के निषेध पर आधारित है और न ही उन्हें विलुप्त करने का प्रयास करती है, बल्कि यह भिन्नताओं को स्वीकार करते हुए एक साझा सामाजिक चेतना के निर्माण पर बल देती है (सेन, 2010)। इस दृष्टि से सामाजिक समरसता लोकतांत्रिक समाज की आधारशिला मानी जाती है, जहाँ विविधता और एकता परस्पर विरोधी न होकर पूरक बन जाती हैं।

सामाजिक समरसता के प्रमुख घटकों में समानता, सहिष्णुता और पारस्परिक सम्मान केंद्रीय भूमिका निभाते हैं। समानता का आशय केवल विधिक या औपचारिक समानता तक सीमित नहीं है, बल्कि अवसरों, संसाधनों और सामाजिक मान्यता तक समान पहुँच से भी है। सहिष्णुता विभिन्न विचारों, विश्वासों और जीवन-पद्धतियों के प्रति सहनशील दृष्टिकोण को विकसित करती है, जिससे सामाजिक तनाव और संघर्ष की संभावनाएँ कम होती हैं। पारस्परिक सम्मान इन दोनों घटकों को व्यवहारिक स्तर पर सुदृढ़ करता है, क्योंकि यह अन्य की पहचान और गरिमा को स्वीकार करने की नैतिक भावना को विकसित करता है (पारेख, 2006)। ये तत्व मिलकर सामाजिक समरसता को एक सक्रिय और गतिशील प्रक्रिया के रूप में स्थापित करते हैं।

शिक्षा, विशेषतः उच्च शिक्षा, सामाजिक समरसता के विकास का एक प्रभावी माध्यम मानी जाती है। शिक्षा व्यक्तियों को केवल ज्ञान और कौशल ही नहीं प्रदान करती, बल्कि सामाजिक मूल्य, दृष्टिकोण और व्यवहार भी गढ़ती है। पाठ्यक्रमों में विविध सांस्कृतिक अनुभवों और सामाजिक वास्तविकताओं को सम्मिलित करना छात्रों में समावेशी सोच और आलोचनात्मक चेतना को विकसित करता है (बैक्स, 2015)। इसके अतिरिक्त, कक्षा-कक्ष के बाहर होने वाली सह-पाठ्यचर्या गतिविधियाँ, समूह-कार्य और संवाद-आधारित शिक्षण विधियाँ विविध पृष्ठभूमियों के छात्रों को एक-दूसरे के निकट लाने में सहायक होती हैं।

उच्च शिक्षण संस्थानों का शैक्षणिक परिवेश सामाजिक समरसता के व्यवहारिक अभ्यास का क्षेत्र बन सकता है, जहाँ विद्यार्थी लोकतांत्रिक सहभागिता, असहमति के प्रति सम्मान और सहयोग की संस्कृति को आत्मसात करते हैं। समाजशास्त्रीय दृष्टि से शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन का साधन माना गया है, जो असमानताओं को चुनौती देकर अधिक न्यायसंगत और समरस समाज के निर्माण में योगदान देती है (बोर्डियू, 1986)। इस प्रकार, सामाजिक समरसता और शिक्षा के बीच अंतर्संबंध यह स्पष्ट करता है कि समावेशी और बहुसांस्कृतिक शिक्षा प्रणाली के बिना दीर्घकालिक सामाजिक एकता की कल्पना अधूरी है। उच्च शिक्षा में बहुसांस्कृतिकता और सामाजिक समरसता के बीच एक गहन और पारस्परिक अंतर्संबंध विद्यमान है। बहुसांस्कृतिक शैक्षिक वातावरण वह आधार प्रदान करता है जहाँ विभिन्न सामाजिक, सांस्कृतिक, भाषिक और धार्मिक पृष्ठभूमियों से आए विद्यार्थी न केवल सह-अस्तित्व में रहते हैं, बल्कि साझा शैक्षणिक और सामाजिक अनुभवों के माध्यम से एक-दूसरे को समझने का अवसर भी प्राप्त करते हैं। यह निरंतर अंतःक्रिया पूर्वाग्रहों को चुनौती देती है और 'हम' तथा 'वे' जैसे विभाजनकारी दृष्टिकोणों को कमजोर करती है, जिससे सामाजिक समरसता की प्रक्रिया को बल मिलता है (बैक्स, 2015)।

बहुसांस्कृतिक परिवेश में शिक्षण-अधिगम की प्रक्रिया अधिक संवादात्मक और सहभागी बनती है। विविध दृष्टिकोणों की उपस्थिति कक्षा-कक्ष को एक जीवंत विमर्श-स्थल में परिवर्तित कर देती है, जहाँ सामाजिक अनुभवों और

सांस्कृतिक संदर्भों की बहुलता ज्ञान के निर्माण को समृद्ध करती है। इस प्रक्रिया में विद्यार्थी न केवल अन्य समुदायों के जीवन के विषय में समझते हैं, बल्कि अपनी ही सांस्कृतिक धारणाओं पर आत्मालोचनात्मक दृष्टि विकसित करते हैं (पारेख, 2006)। यह बौद्धिक और भावनात्मक विकास सामाजिक सहिष्णुता और पारस्परिक सम्मान को सुदृढ़ करता है, जो सामाजिक समरसता के अनिवार्य तत्व हैं। सामाजिक तनाव, भेदभाव और बहिष्करण प्रायः अज्ञान, रूढ़ धारणाओं और शक्ति-असंतुलनों से उत्पन्न होते हैं। बहुसांस्कृतिक उच्च शिक्षा इन कारकों को चुनौती देने की क्षमता रखती है, क्योंकि यह संस्थागत स्तर पर समान अवसर, प्रतिनिधित्व और सहभागिता को प्रोत्साहित करती है। समावेशी नीतियाँ, विविधता-संवेदनशील पाठ्यक्रम और समानतामूलक अकादमिक वातावरण हाशिए पर रहे समूहों को दृश्यता और आवाज प्रदान करते हैं, जिससे सामाजिक बहिष्करण की प्रवृत्तियाँ कमजोर होती हैं (सेन, 2010)। इस प्रकार, उच्च शिक्षा सामाजिक न्याय और समरसता के व्यावहारिक अभ्यास का क्षेत्र बन जाती है।

इसके अतिरिक्त, विश्वविद्यालय परिसर में होने वाली सांस्कृतिक गतिविधियाँ, समूह परियोजनाएँ और सह-पाठ्यचर्या कार्यक्रम विविध पृष्ठभूमियों के छात्रों के बीच सहयोग और विश्वास को बढ़ावा देते हैं। यह साझा सहभागिता सामाजिक दूरी को कम करती है और एक साझा संस्थागत पहचान के निर्माण में सहायक होती है, जो व्यक्तिगत या समूहगत पहचान से ऊपर उठकर कार्य करती है (अग्रवाल, 2020)। परिणामस्वरूप, सामाजिक संबंध अधिक समतामूलक और संवाद-आधारित बनते हैं। अतः यह स्पष्ट होता है कि बहुसांस्कृतिकता और सामाजिक समरसता एक-दूसरे से पृथक अवधारणाएँ नहीं हैं, बल्कि उच्च शिक्षा के संदर्भ में वे परस्पर पूरक और सुदृढ़कारी संबंध में बंधी हुई हैं। बहुसांस्कृतिक शैक्षिक वातावरण सामाजिक तनावों को कम करने, भेदभावपूर्ण दृष्टिकोणों को चुनौती देने और एक अधिक समावेशी, सहिष्णु तथा समरस समाज के निर्माण में निर्णायक भूमिका निभाता है।

5. समकालीन चुनौतियाँ और बाधाएँ

भारतीय उच्च शिक्षा में बहुसांस्कृतिकता और सामाजिक समरसता के विकास के बावजूद अनेक संरचनात्मक और सामाजिक चुनौतियाँ विद्यमान हैं, जो इस प्रक्रिया को जटिल बनाती हैं। जातिगत असमानता अब भी उच्च शिक्षा के अनुभवों को प्रभावित करने वाला एक प्रमुख कारक है। यद्यपि संवैधानिक प्रावधानों और आरक्षण नीतियों के माध्यम से उच्च शिक्षा तक पहुँच का विस्तार हुआ है, फिर भी विश्वविद्यालय परिसरों में सामाजिक पदानुक्रम, सूक्ष्म भेदभाव और प्रतीकात्मक बहिष्करण की स्थितियाँ देखी जाती हैं (अम्बेडकर, 1948; देसाई, 2012)। यह स्थिति सामाजिक समरसता के आदर्श को व्यावहारिक स्तर पर चुनौती देती है और बहुसांस्कृतिक सहभागिता को सीमित करती है।

सांस्कृतिक वर्चस्व की प्रवृत्ति भी एक गंभीर बाधा के रूप में उभरती है, जहाँ प्रभुत्वशाली सामाजिक समूहों की सांस्कृतिक मान्यताएँ, भाषा और ज्ञान-परंपराएँ शैक्षणिक विमर्श पर हावी हो जाती हैं। इसके परिणामस्वरूप वैकल्पिक सांस्कृतिक अनुभव और हाशिए के ज्ञान-रूप उपेक्षित रह जाते हैं, जिससे समावेशन की प्रक्रिया अधूरी रह जाती है (पारेख, 2006)। भाषिक भेदभाव भी इसी वर्चस्व से जुड़ा हुआ है, क्योंकि अंग्रेज़ी या किसी एक प्रमुख भाषा का अत्यधिक प्रभुत्व कई छात्रों के लिए अकादमिक सहभागिता और आत्म-अभिव्यक्ति में बाधा उत्पन्न करता है (पांडेय, 2018)।

डिजिटल डिवाइड समकालीन उच्च शिक्षा की एक नई, किंतु गहन चुनौती के रूप में सामने आया है। ऑनलाइन शिक्षण, डिजिटल संसाधनों और वैश्विक ज्ञान तक पहुँच की असमानता सामाजिक और आर्थिक विभाजनों को और गहरा कर सकती है। ग्रामीण, वंचित और तकनीकी रूप से पिछड़े वर्गों के छात्रों के लिए यह स्थिति बहुसांस्कृतिक सहभागिता को सीमित कर देती है (अग्रवाल, 2020)। इसके अतिरिक्त, कई उच्च शिक्षण संस्थान संसाधनों, प्रशिक्षित शिक्षकों और समावेशी नीतिगत ढाँचों के अभाव से भी जूझ रहे हैं, जिससे बहुसांस्कृतिक और समरसतामूलक प्रयास

प्रभावी रूप से क्रियान्वित नहीं हो पाते। इन चुनौतियों के बावजूद भारतीय उच्च शिक्षा में सामाजिक समरसता को सुदृढ़ करने की व्यापक संभावनाएँ विद्यमान हैं। पाठ्यक्रम सुधार इस दिशा में एक महत्वपूर्ण रणनीति हो सकता है, जिसके अंतर्गत विविध सांस्कृतिक अनुभवों, हाशिए के दृष्टिकोणों और सामाजिक न्याय से जुड़े विमर्शों को अकादमिक पाठ्यक्रमों में समाहित किया जाए। ऐसा पाठ्यक्रम छात्रों में आलोचनात्मक चेतना और समावेशी दृष्टिकोण को विकसित करने में सहायक होता है (बैक्स, 2015)।

शिक्षक प्रशिक्षण भी एक केंद्रीय भूमिका निभाता है, क्योंकि शिक्षक बहुसांस्कृतिक कक्षा-कक्ष के मार्गदर्शक होते हैं। विविधता-संवेदनशील और संवाद-आधारित शिक्षण विधियों में प्रशिक्षित शिक्षक सामाजिक भिन्नताओं को सीखने के संसाधन में परिवर्तित कर सकते हैं (ड्यूई, 1916)। संवाद-आधारित शिक्षण, समूह-कार्य और सहभागितामूलक अधिगम छात्रों के बीच पारस्परिक समझ और सहयोग को बढ़ावा देता है, जिससे सामाजिक दूरी और पूर्वाग्रह कम होते हैं। अंतर-सांस्कृतिक कार्यक्रम, छात्र-विनिमय, सांस्कृतिक संवाद मंच और सामुदायिक सहभागिता जैसी पहलें विश्वविद्यालय परिसरों को सामाजिक समरसता के सक्रिय केंद्र में परिवर्तित कर सकती हैं। ये गतिविधियाँ औपचारिक शिक्षा से आगे बढ़कर अनौपचारिक अधिगम के माध्यम से सहिष्णुता और सम्मान की भावना को सुदृढ़ करती हैं (सेन, 2010)। साथ ही, नीति-स्तरीय सुधार—जैसे समावेशी प्रवेश नीतियाँ, समान अवसर संरचनाएँ और डिजिटल समावेशन की पहल—बहुसांस्कृतिक उच्च शिक्षा के लिए अनुकूल संस्थागत वातावरण तैयार कर सकती हैं।

इस प्रकार, यदि नीतिगत प्रतिबद्धता, शैक्षणिक नवाचार और सामाजिक संवेदनशीलता को समन्वित रूप से अपनाया जाए, तो भारतीय उच्च शिक्षा न केवल बहुसांस्कृतिक विविधताओं का प्रतिनिधित्व कर सकती है, बल्कि सामाजिक समरसता और लोकतांत्रिक मूल्यों के सुदृढ़ीकरण का प्रभावी माध्यम भी बन सकती है।

6. निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि भारतीय उच्च शिक्षा प्रणाली अपने ऐतिहासिक, सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भों में बहुसांस्कृतिकता और सामाजिक समरसता की सुदृढ़ संभावनाएँ समेटे हुए है। भारतीय समाज की जातीय, भाषिक, धार्मिक और क्षेत्रीय विविधताएँ उच्च शिक्षा संस्थानों में प्रतिनिधित्व पाती हैं, जिससे विश्वविद्यालय परिसर सामाजिक बहुलता के सजीव स्थल के रूप में उभरते हैं। अध्ययन के विभिन्न खंडों में यह प्रतिपादित किया गया है कि बहुसांस्कृतिक शैक्षिक वातावरण केवल विविधताओं की उपस्थिति तक सीमित नहीं है, बल्कि वह संवाद, सहभागिता और पारस्परिक सम्मान के माध्यम से सामाजिक समरसता को सक्रिय रूप से प्रोत्साहित करता है।

यह भी स्पष्ट हुआ है कि उच्च शिक्षा सामाजिक तनाव, भेदभाव और बहिष्करण को कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है, बशर्ते वह समावेशी नीतियों, विविधता-संवेदनशील पाठ्यक्रम और लोकतांत्रिक शैक्षणिक व्यवहारों को अपनाए। विश्वविद्यालयों में विद्यमान बहुसांस्कृतिक व्यवहार—जैसे विविध छात्र-समुदाय, बहुभाषिकता और अंतर-सांस्कृतिक संवाद—सामाजिक एकीकरण की आधारशिला रखते हैं, जबकि जातिगत असमानता, सांस्कृतिक वर्चस्व और डिजिटल डिवाइड जैसी चुनौतियाँ इस प्रक्रिया को जटिल बनाती हैं। इन निष्कर्षों के आलोक में यह कहा जा सकता है कि भारतीय उच्च शिक्षा को सामाजिक समरसता और राष्ट्रीय एकता के सशक्त माध्यम के रूप में विकसित करना समय की अनिवार्यता है। उच्च शिक्षण संस्थान यदि विविधताओं को विभाजन का कारण न मानकर सामूहिक शक्ति के रूप में स्वीकार करें, तो वे ऐसे नागरिकों का निर्माण कर सकते हैं जो लोकतांत्रिक मूल्यों, सामाजिक न्याय और सह-अस्तित्व की भावना से प्रेरित हों। इस प्रकार, बहुसांस्कृतिकता पर आधारित उच्च शिक्षा न केवल ज्ञान-सृजन का केंद्र बनती है, बल्कि एक समावेशी, समरस और एकीकृत राष्ट्र के निर्माण में भी निर्णायक योगदान देती है।

संदर्भ सूची:

1. अम्बेडकर, बी. आर. (1948). *भारत का संविधान: एक व्याख्यात्मक अध्ययन*. नई दिल्ली: भारत सरकार प्रकाशन विभाग।
2. अग्रवाल, पी. (2020). *भारतीय उच्च शिक्षा और वैश्वीकरण: अवसर और चुनौतियाँ*. नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
3. बैक्स, जे. ए. (2015). *बहुसांस्कृतिक शिक्षा: मुद्दे और दृष्टिकोण* (अनु. संस्करण). नई दिल्ली: पियर्सन एजुकेशन।
4. बोर्डियू, पी. (1986). *शिक्षा, संस्कृति और सामाजिक असमानता*. लंदन: सेज पब्लिकेशन्स।
5. देसाई, ए. आर. (2012). *भारतीय समाज: संरचना और परिवर्तन*. नई दिल्ली: पॉपुलर प्रकाशन।
6. ड्यूई, जे. (1916). *लोकतंत्र और शिक्षा*. न्यूयॉर्क: मैकमिलन।
7. पांडेय, आर. (2018). भारतीय उच्च शिक्षा में भाषा और समावेशन की समस्या. *शिक्षा और समाज*, 12(2), 45-58।
8. पारेख, भिखु. (2006). *बहुसांस्कृतिकता: एक नागरिक दृष्टिकोण*. नई दिल्ली: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
9. सेन, अमर्त्य. (2010). *पहचान और हिंसा: नियति का भ्रम*. नई दिल्ली: पेंगुइन इंडिया।
10. शर्मा, आर. एन. (2016). *भारतीय शिक्षा का इतिहास और दर्शन*. जयपुर: राजस्थान हिंदी ग्रंथ अकादमी।
11. यूजीसी. (2020). *राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020*. नई दिल्ली: विश्वविद्यालय अनुदान आयोग।